भारत देश में लोक गीत, संगीत, नृत्य, परंपराएं और कलाएं आदि केवल प्रदर्शन या मनोरंजन का साधन नहीं है, वास्तव में ये समाज को सुगठित रूप से संचालित करने का सूत्र है। विभिन्न बोलियों, भाषाओं, अंचलों, संस्कारों वाले विविधता भरे हमारे देश में लोक कलाएं, परंपराएं मानव सभ्यता के विकास की सहयात्री रही हैं। आधुनिक शिक्षा के प्रसार में पारंपरिक लोक परंपराएं, कलाएं लुप्त होती जा रही हैं, उन्हें अपने अस्तित्व और अपने पारंपरिक स्वरूप को बनाए रखने के संकट से जूझना पड़ रहा है। लोक कलाओं की विविध विधाओं से समाज को, विशेषकर नई पीढ़ी को परिचित कराना आवश्यक है।

कठपुतली
लोक कला का जीवंत रूप

हम जब छोटे बच्चे थे, हमारे आसपास कोई भी मेला, धार्मिक त्योहार या सामाजिक आयोजन कठपुतली नाच के बिना अधूरा होता था। भारत में पारंपरिक कठपुतली नाटकों की कथावस्तु में पौराणिक साहित्य, लोक कथाएं और किंवदंतियों की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। कठपुतली राजस्थान की प्राचीन लोक कला है। राजस्थान की यह लोक कला भारत और पूरे विश्व में प्रसिद्ध है। कठपुतली लोक कला भट आदिवासी जाति के लोगों का पारंपरिक व्यवसाय भी है। कठपुतलियों को तार अथवा धागे के माध्यम से अंगुलियों द्वारा नचाया जाता है।

राजकुमार जैन राजन
लेखक

कठपुतली विश्व के प्राचीनतम रंगमंच पर खेले जाने वाले मनोरंजक कार्यक्रमों में से एक है। कठपुतलियों को विभिन्न प्रकार के पुरुष, पशु, देव, असुर पात्रों के रूप में बनाया जाता है। इनका नाम कठपुतली इस कारण पड़ा, क्योंकि इनको लकड़ी अर्थात काष्ट से बनाया जाता था। कठपुतली के इतिहास के बारे में कहा जाता है कि ईसा पूर्व चौथी शताब्दी में महाकवि पाणिनी की 'अष्टाध्याई' ग्रंथ में हमें 'पुतला नाटक' का उल्लेख मिलता है। इसके जन्म को लेकर कुछ पौराणिक मत इस प्रकार मिलते हैं कि भगवान शिवजी ने काठ की मूर्ति में प्रवेश कर, माता पार्वती का मन बहलाकर इस कला को प्रारंभ किया था। इसी प्रकार उज्जैन नगरी के राजा विक्रमादित्य के सिंहासन में जड़ित 32 पुतलियों का उल्लेख 'सिंहासन बत्तीसी' नामक कथा में भी मिलता है।

भारत सहित एशियाई देशों में कठपुतली नाट्य सदियों से लोकानुरंजन और शिक्षण के लिए महत्वपूर्ण भूमिका निभाते आ रहे हैं। भारत से लेकर पूर्वी एशिया के देशों जैसे इंडोनेशिया, म्यांमार, थाईलैंड, श्रीलंका, जावा, सुमात्रा इत्यादि में विस्तार हुआ। आधुनिक युग में यह कला रूस, रोमानिया, चेकोस्लोवाकिया, जर्मनी, जापान, अमेरिका, चीन आदि देशों में विस्तारित हो चुकी है। अब कठपुतली का उपयोग मात्र मनोरंजन न रहकर शिक्षा कार्यक्रमों, विज्ञापनों आदि अनेक क्षेत्रों में किया जा रहा है।

हमारी विविधरंगी लोक संस्कृति, परंपरा, कलाओं की परंपरा में कठपुतली नृत्य का विशेष महत्व है। आज साइबर दुनिया में वैश्वीकरण की आपाधापी में हमारी आने वाली भावी पीढ़ी को हमारी इस स्वर्णिम विरासत से परिचित कराना बेहद आवश्यक हो गया है। हमारी लोकजीवन, संस्कृति, कला, परंपरा आदि का प्रत्येक पक्ष इतना प्रबल व सशक्त है कि संवेदनहीन व्यक्ति भी संवेदना के तीव्र उद्वेग को उत्पन्न कर सकता है। भारतीय कला और कलाकृतियां व्यक्ति की आत्मा को झंझोड़ने की क्षमता रखती है।

उदयपुर शहर में विश्व विख्यात 'भारतीय लोक कला मण्डल' में इसकी स्थापना के साथ ही कठपुतली कला को विश्वव्यापी बनाने के स्तुत्य प्रयास किए हैं। कई कलाकारों को कठपुतली प्रदर्शन का प्रशिक्षण विश्व स्तर पर यहां प्राप्त हुआ है। भारतीय संस्कृति, चिंतनपरंपरा, धर्म, अध्यात्म और दर्शन के मिश्रण ने कठपुतली कला को संप्रेक्षणीय बनाया है। यह सच है कि भारतीय कला परंपराओं का संरक्षण उनके लगातार प्रदर्शन से ही संभव हो सकता है। देश में साक्षरता अभियान, बाल-विवाह, स्वच्छ भारत मिशन अभियान, मतदान के लिए जागरुकता अभियान जैसे आमजन को उनकी अपनी संस्कृति की भाषा में जागरूक करने के लिए कठपुतलियां माहौल को जीवंत कर देती हैं।

कला का क्षेत्र आज बहुत व्यापक हो गया है, इसमें निरंतर नई दृष्टि से कलाओं के नवीन स्वरूप का सृजन हो रहा है। पिछले कुछ वर्षों से राज्य में परंपरागत रीति-रिवाजों पर आधारित कठपुतली के खेलों में काफी परिवर्तन हो गया है। अब यह खेल गांवों, मोहल्लों, सड़कों, गलियों में न होकर थियेटरों, बड़े-बड़े मुक्ताकाशी रंगमंचों व सितारा होटलों में होने लगा है। इसके बावजूद राजकीय संरक्षण व पोषण के अभाव में इस लोक-कला के अस्तित्व पर संकट के बादल मंडरा रहे हैं। अब गांव-मोहल्लों में कहीं कठपुतली का खेल नजर नहीं आता। कठपुतलियां केवल सजावटी वस्तु के रूप में ही खरीदी जा रही हैं। कठपुतली कला के संरक्षण-संवर्धन के लिए व्यापक प्रयत्नों की दरकार है। नए आयाम, नए प्रतिमान, नए मायने और नई तकनीकों की खोजकर कठपुतली कला और कलाकारों को राज्याश्रय मिलना ही चाहिए।

प्रभु श्रीराम के बाल्यकाल की कहानियां सुनाता अयोध्या का दशरथ महल

धार्मिक दृष्टिकोण से विश्व में भारत राम के देश के नाम से जाना जाता है, क्योंकि यहां राम की जन्मस्थली अयोध्या है। यह दुनियाभर के हिंदू धर्मावलंबियों के आस्था का केंद्र है। यहां और भी स्थल हैं, जो भगवान राम से जुड़े हैं और वे उनके बचपन की कहानियां सुनाते हैं। इसी में एक दशरथ महल है, जहां के बारे में कहा जाता है कि बाल्यावस्था में राम यहीं पैजनिया पहनकर ठुमकते हुए चलते थे। रामायण में भी इसका वर्णन है "ठुमक चलत रामचंद्र पहने पैजनिया"।

यशोदा श्रीवास्तव
लेखक

जब चांद के लिए हठ करने लगे प्रभु श्रीराम

वह दशरथ महल ही है, जहां माता कौशल्या की गोद में पैजनिया पहने ठुमक कर चलते सकल ब्रह्मांड के नायक भगवान राम अपने पिता राजा दशरथ से चांद पाने का हठ कर लेते हैं और राजा दशरथ थाली में जल भरकर रामलला को चंद्रमा के प्रतिबिंब को पकड़ लेने को प्रेरित करते हैं। बाल्य अवस्था के राम चंद्रमा को पकड़ने के लिए थाली भरे पानी में छपकोइया खेलते रहते हैं। भगवान राम के बाल्यअवस्था का यह दृश्य हर किसी को मोहित करता है। यह वही दशरथ महल है, जो 500 साल के पराभव काल के दौरान भी मौजूदा रामजन्म भूमि क्षेत्र पर श्रीराम के मंदिर होने के साक्ष्यों की गवाही देता रहा।

सभी धार्मिक ग्रंथों में है दशरथ महल का वर्णन

दशरथ महल के महात्म्य का वर्णन राम से जुड़े सभी ग्रंथों में है। चाहे वाल्मीकि रामायण हो, महान कवि तुलसीदास कृत रामचरित मानस हो या रामानंद सागर कृत रामायण टीवी सीरियल ही क्यों न हो, रामलला के बाल्यकाल के सुलभ हठ, किलकारियां, हंसने-मुसकुराने, रोने-मनाने की लीलाओं का संबंध जिस दशरथ महल के प्रांगण से था इसका उल्लेख सबमें है। यह त्रेतायुग से लेकर आज तक भी यथावत है। भव्य मंदिर में बालस्वरूप रामलला के विराजते ही दशरथ महल का यह प्रांगण भी भाव विह्वल हो उठा।

2021 में हुआ दशरथ महल का जीर्णोद्धार

अयोध्या में चूंकि सभी मंदिर और मसलें जीर्ण-क्षीर्ण थे, दशरथ महल भी खस्ताहाल था। जब भव्य राम मंदिर के निर्माण की बारी आई तभी 2021 में दशरथ महल का भी पुनरोद्धार हुआ। हालांकि वर्ष 2013 में अखिलेश सरकार ने भी इसके जीर्णोद्धार के लिए 2.04 करोड़ का बजट जारी किया था, लेकिन किन्हीं कारणों से दशरथ महल के जीर्णोद्धार का कार्य प्रारंभ नहीं हो सका और वह बजट धरा का धरा गया। शायद उस वक्त की सरकार व उच्च प्रशासन में 'राम काज कीजै बिना मोहे कहां विश्राम' जैसी इच्छा शक्ति का अभाव था।

योगी सरकार ने यहां उपलब्ध कराई तमाम सुविधाएं

योगी सरकार ने दशरथ महल के जीर्णोद्धार व सुविधाओं के सुदृढ़ीकरण की प्रक्रिया को अमली जामा पहनाते हुए करीब तीन करोड़ रुपये खर्च कर यहां सत्संग भवन, प्रवेश द्वार, रैन बसेरा व दर्शनार्थी सहायता केंद्र के निर्माण- पुनरोद्धार व सुदृढ़ीकरण कर इसकी ऐतिहासिक खूबसूरती को बहाल कर दिया है। यहां निर्मित 650 स्क्वायर मीटर में बने सत्संग भवन में लगभग 300 से 350 सत्संगी एक साथ कीर्तन-भजन कर सकेंगे। दशरथ भवन की तरफ श्रद्धालुओं को भौतिक रूप से आकर्षित करने के लिए जगमगाती लाइटिंग सभी को अपनी ओर आकर्षित करती है। यहां श्रीराम के जीवन को चित्रित करते हुए वाल पेंटिंग, रामचरित मानस के दोहे लिखे हैं। दशरथ महल का भव्य प्रवेश द्वार अपने पुराने वैभव को संरक्षित करते हुए यह आधुनिकता की चासनी से भी लैश है। खंभों और दीवारों पर लंबे समयावधि तक टिकाऊ रहने वाले पेंट-कोटिंग की परत चढ़ाई गई है। यहां आने वाले श्रद्धालुओं को कोई असुविधा न हो इसके लिए विशेष दर्शनार्थी सहायता केंद्र भी स्थापित है, जो यहां की समृद्ध विरासत, ऐतिहासिक महत्व, सांस्कृतिक योगदान व आध्यात्मिक महत्व के बारे में अवगत कराता है।

व्यवस्था पर चोट और व्यंग्य का ताना बाना: जी लो जिंदगी व राजा मूंछो सिंह

हल्द्वानी के सुशीला तिवारी मेडिकल कॉलेज के प्रेक्षागृह में रंगमंच की एक ऐसी शाम सजी, जिसने दर्शकों को हंसी और विचार दोनों से भर दिया। राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय, नई दिल्ली, शैलनट और आनंदा अकादमी हल्द्वानी के संयुक्त तत्वावधान में आयोजित एक माह की अभिनय एवं नाट्य प्रशिक्षण कार्यशाला की परिणति स्वरूप दो नाटकों का भव्य मंचन हुआ।

कार्यशाला में प्रशिक्षित कलाकारों में अधिकांश पहली बार मंच पर उतरे थे, किंतु एनएसडी के रंगकर्मी चंदन बिष्ट, चित्रा बिष्ट और शैलनट के संस्थापक श्रीश डोभाल के मार्गदर्शन ने उन्हें ऐसा आत्मविश्वास और परिष्कार दिया कि दर्शक उनकी नवीनता भूल बैठे। अभिनय की सहजता और संवादों की पैनी पकड़ इस बात का प्रमाण थी कि एक माह का यह अभ्यास किसी गहन साधना से कम नहीं रहा। पहला नाटक जी लो जिंदगी, रूस के प्रसिद्ध नाटककार निकोलाई एडमैन की द सुसाइड से प्रेरित था। यह नाटक एक बेरोजगार युवक गुमान सिंह (अथर्व नेगी) की कथा है, जो सास (योगिता भंडारी) और समाज के तानों से जूझते हुए जीवन से हार मान लेता है। विभिन्न संगठनों और संस्थाओं के स्वार्थपूर्ण शोषण से निराश गुमान आत्महत्या जैसा कदम उठाने को बाध्य होता है, किंतु जीवनसंगिनी गीता (संस्कृति लोहनी) का सहयोग और आत्मचिंतन उसे नए उद्देश्य की ओर ले जाता है। गुमान सिंह के रूप में अथर्व नेगी ने अपनी गहन संवेदना से दर्शकों को बांधे रखा, वहीं संस्कृति लोहनी और योगिता भंडारी ने अपने पात्रों को प्राणवान बना दिया। गौरव जोशी ने ठेकेदार के रूप में नाटक में तीखापन और धार जोड़ी। यह नाटक न केवल बेरोजगारी की पीड़ा, बल्कि व्यवस्था की खोखली परतों और स्वार्थी संगठनों पर करारा व्यंग्य था।

हरीश अप्रेती करन
लेखक

दूसरा नाटक राजा मूंछो सिंह एक हल्का-फुल्का व्यंग्य था, जो गंभीर संदेश भी छोड़ गया। राजा (ज्योति जीना) अपनी मूंछों को ही अपनी सत्ता और शान मान बैठता है। नतीजा-राजाज्ञा से सब कुछ मूंछों वाला होना चाहिए, पलंग से लेकर बच्चों के खिलौनों तक। दरबार में मंत्री, कवि, प्रजा सब मूंछों की प्रशंसा में गीत गाते और लाभ उठाते हैं। यहां तक कि चोर-उचक्के भी मूंछों पर कविता सुनाकर सजा मुक्त हो जाते हैं। इस रंग-व्यंग्य के बीच जब एक पड़ोसी राज्य का जासूस नाई बनकर मूंछें काट देता है, तब राजा को अपने कर्तव्य का बोध होता है कि राजधर्म शान-शौकत में नहीं, प्रजाहित में है। रानी (गुंजन अधिकारी) और नटी (मयाली पांडे) व दुश्मन देश के सैनिक के रूप में वैभव बेलवाल ने अपने सहज और चुलबुले अभिनय से नाटक को जीवंत बनाया। दोनों प्रस्तुतियां दर्शाती हैं कि मंच केवल मनोरंजन का साधन नहीं, बल्कि समाज का आईना और प्रश्न करने का माध्यम भी है। जी लो जिंदगी जहां व्यवस्था और बेरोजगारी की चुभन को उघाड़ता है, वहीं राजा मूंछो सिंह व्यंग्य और हंसी के जरिए सत्ता के असली कर्तव्यों की याद दिलाता है। हल्द्वानी की इस रंग-संध्या ने सिद्ध कर दिया कि थोड़े समय की सघन साधना भी यदि सही मार्गदर्शन और समर्पण से हो तो वह मंच पर अद्भुत प्रभाव छोड़ सकती है।